पेरिस
दिसम्बर २५, २००८
क्रिसमस दिवस

सन्देश संख्या १५६

आनन्द

विलियम ब्लेक ने लिखा है – ''जो जीवन रूपी आकाश में 'उड़ते आनन्द' को चूम लेता है, वही शाश्वत–सूर्योदय के प्रकाश में जीता है ।'' किन्तु हमलोग अपने आनन्द को विचारों के माध्यम से मनोनुकूल बनाना चाहते हैं, उसे अपनी स्मृति में इस आशा से संजोये रखना चाहते हैं कि उस आनन्द की पुनर्प्राप्ति हो सके और भविष्य के आनन्द में और वृद्धि हो सके । परन्तु ऐसा होता नहीं है क्योंकि ''मैं'' उसमें संलिप्त हो जाता है और उस दिव्य आनन्द को क्षणिक सुख के रूप में विकृत कर देता है । जीवन की अनुभूति के लिए मन के अनुभवों से मुक्त होना ही होगा । आनन्द का सम्बन्ध जीवन से है जबकि सुख का सम्बन्ध मन से हैं । आनन्द अस्तित्व के साथ एकाकार होने की अवस्था है यानि कि तद्रूप होने की अवस्था है, तदाकार होने की स्थिति है जबकि सुख अनुभवों के जाल में तथा उसके बन्धनों में फँसे होने की अवस्था है । आनन्द के बोध की प्रत्येक घटना नूतन अस्तित्व के चमत्कार को उद्घाटित करती है और तब कृपा चुपके–चुपके आती है, इतना धीरे–धीरे कि व्यक्ति इसे जान नहीं पाता । व्यक्ति उसका द्रष्टा नहीं रह पाता । इस आनन्द की अवस्था में ''मैं'' पूर्णतया समाप्त हो जाता है । यह अत्यन्त प्रेममय एवं शान्तिपूर्ण अवस्था है जिसमें व्यक्ति निर्दोष एवं अकारण ऊर्जा को उपलब्ध होता है । यह आनन्द शब्दातीत है ।

क्रिया–ऊर्जा को उपलब्ध बुल्गारिया के भक्तों को इस बात के लिए धन्यवाद है कि उनके प्रयास से शिवेन्दु को ग्रीस (यूनान) में मठवासियों के स्वायत्त द्वीप ''रिपब्लिक ऑफ होली माउण्ट एथॉस'' और उसके पवित्र जंगल में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जो प्रतिबन्धित–क्षेत्र है । उसमें प्रवेश वहाँ के पवित्र अधिकारियों द्वारा नियन्त्रित होता है । उसमें केवल ईसाई (९० ऑर्थोडॉक्स ईसाई होना चाहिए और १० अन्य ईसाई) लोगों के प्रवेश की अनुमति है । शिवेन्दु को वहाँ प्रवेश की अनुमति मिलना, एक चमत्कार ही था क्योंकि इसकी आशा बिल्कुल नहीं थी । शायद एकाकीपन ही सर्वसंयोजन है, 'कुछ नहीं होना' ही 'सब कुछ होना' है । जिसमें ईसाइयत भी शामिल है ।

वहाँ के मठ विशाल, भव्य, सुन्दर एवं समृद्ध थे । भोजन एवं सुविधाओं का प्रबन्ध अति उत्तम था। हमलोग (शिवेन्दु और बुल्गारिया के चार भक्त) चार मठों में एक–एक रात ठहरे और दो अन्य मठों में भी गए । सभी जगह पीने के लिए महँगे शराब प्रचुर मात्रा में दिए जाते थे । दुर्भाग्यवश, अपने 'शराब नहीं पीने' के अनुबन्धन या संस्कार के कारण शिवेन्दु उस उत्तेजक आतिथ्य–सत्कार का लाभ नहीं उठा सका। तथापि, उसका 'निर्मन' अनुबन्धन से मुक्त है ।

एक मठ में, एक मठवासी को शिवेन्दु के ईसाई होने में संशय हुआ तो उसने शिवेन्दु को अपना क्रॉस दिखाने के लिए कहा । तब शिवेन्दु ने अँगुलियों के इशारे से ''ठोकर–क्रिया'' दिखाया । उस मठवासी को बहुत आश्चर्य हुआ किन्तु शिवेन्दु ने उसे यह कहकर आश्वस्त किया कि यह अत्यन्त गहन क्रॉस है जिसे कुछ लोग ही जानते हैं । अगले दिन प्रातः वही मठवासी मेरे कमरे में आया तथा बाइबिल का भजन सुरीले स्वर में गाकर सुनाया । तब शिवेन्दु भी वेद–मन्त्र ''श्रृण्वन्तु विश्वे ...'' गाकर सुनाया । वह मठवासी भाव–विभोर हो गया तथा आश्चर्य व्यक्त किया कि इसका अर्थ इतना गम्भीर भी हो सकता है।

शिवेन्दु के ईसाई होने पर जब दूसरे व्यक्ति को शक हुआ तक उसने मेरे साथ रहने वाले बुल्गारिया के भक्तों को यह सुझाव दिया कि वे अपनी 'आत्माओं' का ध्यान रखें न कि योग के चक्कर में फँसकर अपना सर्वनाश करें। केवल एक मठ में शिवेन्दु को एक बुजुर्ग एवं बुद्धिमान यूनानी मठवासी से मुलाकात हुई जो धाराप्रवाह अंग्रेजी बोलते थे । उनसे यह जानकर सचमुच बहुत आनन्द हुआ कि ऑर्थोडॉक्स ईसाइयत की शब्दत्रयी 'प्रबोधन–शुद्धीकरण–देवत्वप्राप्ति', ठीक वैसी ही है जैसा कि क्रियायोग का 'स्वाध्याय–तप–ईश्वर प्रणिधान' तथा प्राचीन काल का 'साख्य–योग–वेदान्त' है ।

यद्यपि मठवासी मधुर–भाषी थे किन्तु उनकी अपनी धारणाओं एवं विश्वासों के कारण उनमें दूसरों के प्रति निन्दा–भाव विद्यमान था । वे स्वतन्त्र नहीं थे बल्कि दबाये गये लोग थे और इसीलिए वे दमित्त चित्त के कारण कठोर थे । उनके हाव–भाव एवं झुके हुए सिर, उनकी विशिष्ट जानकारी से उत्पन्न प्रसन्नता को प्रकट करते थे । यूक्रेन के मठ में होने वाले समारोह में शिवेन्दु को भाग लेने की अनुमति नहीं मिली।

वे अपनी आध्यात्मिकता से सन्तुष्ट लगते थे । वे जिसे ईश्वर कहते हैं, उस ईश्वर की खोज के सुख से वे सन्तु थे । उनके विशेष परिधानों एवं शरीर को रखने की उनकी विशिष्ट विधि थी जिसमें उनके प्रयोजन की हठधर्मिता तो थी किन्तु विनम्रता का घोर अभाव स्पष्ट था । वहाँ कामुकता में लिप्त होने का भय सर्वत्र व्याप्त था और इसीलिए ह्वाइट सी के उस पवित्र एटन द्वीप (सर्वोच्च चोटी) पर महिलाओं का प्रवेश वर्जित था । अपने लगभग सत्तर वर्षों के जीवन–काल में शिवेन्दु को पहली बार कई दिनों तक औरतों के करुणमुखारविन्द से वंचित रहना पड़ा था । वहाँ केवल दाढ़ी रूपी तथाकथित पवित्र जंगलों से ढका हुआ पुरूष–चेहरा ही दिखाई पड़ता था । वहाँ माँ–मरियम की सौम्य मुखवाली एवं शिशु यीशु का निर्दोष मुखमंडल वाली तस्वीरें पूरे द्वीप में हजारों की संख्या में थीं क्योंकि ये तस्वीरें ऑर्थोडॉक्स ईसाइयत के प्रतीक मानी जाती हैं । उनमें से कुछ बड़ी मूर्त्तियों को चमत्कार का प्रतीक माना जाता है और उनके बारे में कई कहानियाँ भी कही जाती हैं । ये मूर्त्तियाँ बहुमूल्य एवं आकर्षक हीरे–जवाहरात एवं मणि–रत्नों से जड़ित थीं जो शायद लोभ, तुष्टीकरण, महिमामण्डन आदि के साथ मन की आसक्ति को ही प्रदर्शित करती थीं । स्त्री जाति का पशु होने के कारण गायों का भी उस तथाकथित पवित्र द्वीप में प्रवेश वर्जित था, किन्तु उस द्वीप के बाजारों में डिब्बाबन्द दूध प्रचुरता में उपलब्ध था। मठवासी स्त्रियों का विरोध करते हैं किन्तु एक स्त्री 'मेरी' ने उन सभी को जीत लिया है । चैतन्य का उद्घाटन न तो स्त्रियों के विरोध में है, और न ही उनसे पलायन में है, अपितु साक्षी–भाव में है, जागरण में है ।

हम अपने विश्वासपद्धतियों एवं ईश्वर से तब तक मुक्त नहीं हो सकते जब तक हम अपने ''अहंभाव'' से मुक्त नहीं होते । 'अहंभाव' से मुक्ति ईश्वर से भी मुक्ति है । इस परम मुक्ति में ही उस असीम एवं अज्ञेय भगवत्ता का उदय होता है, उद्घाटन होता है । भगवत्ता की झलक के लिए चित्तवृत्ति के विभेदकारी अंशों, अवयवों एवं उसकी विभेदकारी प्रक्रिया का अन्त होना आवश्यक है । प्रत्येक तथ्य को केवल तथ्य रूप में देखने से अर्थात् उस तथ्य के बारे में ज्ञात जानकारियों एवं निष्कर्षों की सहायता के बिना यानी कि द्रष्टा के दोष से रहित दर्शन से ही वह ऊर्जा उपलब्ध होती है जो हमें हर क्षण सजगता में रहने के योग्य बनाती है, हर क्षण होश में, अवेअरनेस में रहने के लिए सामर्थ्यवान बनाती है । अन्यथा, ''मैं'' की गतिविधियों तथा उससे उत्पन्न विचारों के संघर्ष में ही उस ऊर्जा का क्षय हो जाता है ।

पेरिस महानगर के इस उपनगर में आज की रात्रि अत्यन्त शान्त और शीतल है । क्रिसमस–उत्सव के अवसर पर महानगरों में खत्म होने वाली भीड़ एवं उसके उन्माद का यहाँ अभाव है ।

सम्प्रति,

इस कक्ष एवं इसके चारो ओर फैले क्षेत्र में एक अद्भुत, असीम और दिव्य अहोभाव व्याप्त है । यही परमानन्द है ।

।। जय आनन्द ।।